बिज़नेस स्टैंडर्ड

*Date: 16-11-18*

# एंट्रिक्स पर दें ध्यान

**संपादकीय**

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने बुधवार को 3,400 किलोग्राम वजन वाले संचार उपग्रह जीसैट-29 को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया। यह बताता है कि उसने अपने जीएसएलवी मार्क-3 रॉकेट की मदद से चार टन तक वजन को अंतरिक्ष में स्थापित करने की क्षमता विकसित कर ली है। उम्मीद की जा रही है कि चंद्रयान-2 मिशन में जीएसएलवी -3 का इस्तेमाल किया जाएगा। वर्ष 2022 तक इसरो का इरादा तीन अंतरिक्ष यात्रियों को अंतरिक्ष में भेजने का है। वह शुक्र ग्रह पर मानव रहित अभियान की योजना भी बना रहा है। इसके लिए बहुत अधिक मात्रा में बजट और मानव संसाधन की आवश्यकता होगी जबकि यह संस्थान बहुत सीमित संसाधनों में काम करता आया है।

शुक्र ग्रह पर अभियान भेजने के लिए इसरो को संसाधनों के साथ-साथ नई तकनीकों की भी आवश्यकता है। ऐसे में वह कई दिशाओं में अपना विस्तार करेगा। इस अभियान के जरिये वह यह पता लगाना चाहता है कि उच्च विकिरण वाले वायु रहित और अत्यधिक उच्च तापमान वाली परिस्थितियों में लोगों को स्वस्थ कैसे रखा जा सकता है। उसे वित्तीय संसाधन मुहैया कराए जाने चाहिए। अंतरिक्ष कार्यक्रम ने हमें संचार, मानचित्रण, मौसम के पूर्वानुमान आदि कई क्षेत्रों में लाभान्वित किया है। उदाहरण के लिए नया जीसैट-29 उपग्रह दूरदराज वाले इलाकों में उच्च गति और उच्च क्षमता वाले डेटा स्थानांतरण की सुविधा देगा। परंतु बजट के समर्थन के अलावा अब वक्त आ गया है कि इसरो को वाणिज्यिक रूप से इतना सक्षम बनाया जाए कि वह अपनी क्षमताओं का पूर्ण इस्तेमाल कर सके। इसके अलावा वह जो नई क्षमताएं जुटाएगा उनकी सहायता से भी वह अपने लिए सार्थक राजस्व जुटा सकता है। ऐसा इसलिए भी जरूरी है क्योंकि वाणिज्यिक उपग्रह बाजार में कई रोचक तकनीकी विकास हुए हैं। एक अनुमान के मुताबिक यह सालाना 3,000 करोड़ डॉलर का बाजार है और यह इसरो के पक्ष में जा सकता है। अधिकांश राष्ट्रीय अंतरिक्ष एजेंसियों (और एलन मस्क के स्पेसएक्स जैसे निजी संचालक) ने ऐसे यान प्रक्षेपित करने पर ध्यान केंद्रित किया है जो भारी वजन अंतरिक्ष में ले जा सकते हैं।

इस बीच लघु रूपांतरण ने सूक्ष्म और लघु उपग्रहों के विकास में मदद की है। इनमें से कई का वजन मात्र 10 से 30 किलोग्राम तक है। ऐसे में एक यान से कई सूक्ष्म उपग्रह अंतरिक्ष में भेजे जा सकते हैं। इसरो ने जनवरी में एक साथ 31 उपग्रह प्रक्षेपित करके क्षमताएं साबित भी कर दी हैं। इनकी प्रक्षेपण लागत दुनिया में सबसे कम है। इस बड़े बाजार में प्रवेश को अन्य कारोबारी भी उत्सुक हैं। एक नई निजी अंतरिक्ष कंपनी रॉकेट लैब्स का मानना है कि वह केवल छोटे उपग्रहों को प्रक्षेपित करके 'रॉकेट लॉन्च की फेडएक्स' साबित हो सकती है। उसने हाल ही में इलेक्ट्रॉन नामक रॉकेट की मदद से 11 उपग्रह अंतरिक्ष में भेजे। उसकी अधिकतम भारवहन क्षमता 225 किलोग्राम है। इसके अलावा अन्य निजी कंपनियां जैसे कि जेफ बेजोस की ब्लू ओरिजन और रिचर्ड ब्रैनसन का वर्जिन समूह भी इसे लेकर गंभीर हैं। इसरो में

यह तकनीकी क्षमता है कि वह इस बाजार में दबदबा कायम कर सके। परंतु उसे अपनी सेवाओं को प्रतिस्पर्धी बताते हुए उनकी मार्केटिंग करनी होगी। परंतु इसरो की वाणिज्यिक शाखा एंट्रिक्स देवास विवाद के समय से ही संदेह के घेरे में है।

सन 2013-15 के बीच भारत को वाणिज्यिक प्रक्षेपण से केवल 650 करोड़ रुपये ही हासिल हुए। वर्ष 2016-17 में एंट्रिक्स को केवल 190 करोड़ रुपये प्राप्त हुए। यह एक बड़े बाजार का छोटा सा हिस्सा है। सरकार को इसरो की सहायता करने के साथ-साथ एंट्रिक्स को भी इतना सक्षम बनाना चाहिए कि वह आक्रामक ढंग से प्रतिस्पर्धा कर सके। एंट्रिक्स को एक पूर्ण सार्वजनिक उपक्रम बनाना उचित होगा जिसके पास अपनी पूंजी हो। तभी वह वाणिज्यिक प्रक्षेपण के आकर्षक बाजार में पूर्ण प्रतिस्पर्धा कर सकेगी।

---

दैनिक भास्कर

***Date: 16-11-18***

# इसरो के इस तीर से भारत ने साध लिए हैं कई निशाने

**संपादकीय**

इसरो ने बुधवार को जीएसएलवी एम के-III जैसे भारी भरकम रॉकेट से जीसैट-29 नामक संचार उपग्रह कक्षा में स्थापित करके एक तीर से कई निशाने साध लिए। इस प्रक्षेपण ने न सिर्फ वैज्ञानिकों को आने वाले चंद्र अभियान के लिए आत्मविश्वास दिया है बल्कि पूर्वोत्तर और कश्मीर में संचार की प्रभावशाली व्यवस्था स्थापित करने की दक्षता प्राप्त की है। लगभग 25 वर्षों के शोध के बाद विकसित इस रॉकेट ने न सिर्फ जीसैट-29 जैसे 3,423 किलो के संचार उपग्रह को कक्षा में सफलता पूर्वक स्थापित किया है बल्कि यह उच्च कक्षा में 4,000 किलोग्राम तक के उपग्रह को स्थापित कर सकता है। इस रॉकेट को अगर निचली कक्षा में किसी उपग्रह को स्थापित करना है तो उसके लिए यह 10,000 किलोग्राम का वजन भी वहन कर सकता है। यह तीन चरणों का भारी वजन उठाने वाला रॉकेट है, जिसमें पहले चरण में दो ठोस ईंधन वाले चैंबर हैं। दूसरे चरण में इस रॉकेट में तरल ईंधन वाला प्रणोदक है और तीसरे चरण में क्रायोजनिक इंजन है। इसीलिए इसरो के चेयरमैन के शिवन ने अपनी छाती ठोकते हुए कहा है कि आज भारत ने अंतरिक्ष में एक मील का पत्थर गाड़ दिया है। यह प्रक्षेपण सिर्फ एक ताकतवर रॉकेट की बानगी ही नहीं प्रस्तुत करता बल्कि उच्च टेक्नोलॉजी वाली संचार प्रणाली की आश्वस्ति भी प्रदान करता है।

अब न सिर्फ बेहतरीन तस्वीरें खींचना संभव होगा बल्कि कश्मीर और पूर्वोत्तर के दूरदराज के इलाकों से तमाम आवश्यक डेटा हस्तांतरित करना भी संभव होगा। बुधवार को ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सिंगापुर में वित्तीय टेक्नोलॉजी से संबंधित मेले में अपने संबोधन में इसी सपने को दोहराया था। संचार उपग्रह में क्यू और वी बैंड की संचार टेक्नोलॉजी है और उससे दृश्य संबंधी संचार में सुविधा होगी। भारत को अपने चंद्रमिशन के लिए इस तरह की टेक्नोलॉजी की जरूरत पड़ेगी। भारत चंद्रमा पर मनुष्य भेजने की तैयारी में है और इस तरह की दक्ष संचार टेक्नोलॉजी के बिना वैसा कर पाना संभव नहीं है। बड़ी बात यह है कि इतने भारी रॉकेट का प्रक्षेपण किसी हल्के रॉकेट की तरह ही सटीक और सफल रहा। 1992

में भारत ने क्रायोजेनिक टेक्नोलॉजी को साधने के जिस पथ पर कदम बढ़ाया था वह अब मजबूती से जम गया है और अमेरिका, रूस, जापान, फ्रांस और चीन की कतार में हम खड़े हैं। निश्चित तौर पर हमें अपने वैज्ञानिकों पर गर्व होना चाहिए।

---

***Date: 16-11-18***

# देश में सामाजिक जागरण के युग की शुरुआत

## 'मी टू' आंदोलन के असर को स्थायी बनाने के लिए लड़कों की परवरिश का तरीका बदलना होगा

**गुरुचरण दास , ( लेखक और स्तंभकार )**

जब आर्थिक वैश्वीकरण के लिए बड़े खतरे उत्पन्न हो रहे हैं, भावनाओं और संस्कृति की दुनिया में बिल्कुल विपरीत ट्रेंड सामने आया है। जिस असाधारण गति से #Me Too आंदोलन फैला है, उसे वैश्वीकरण के लिए भावांजलि ही कहा जा सकता है। एक साल के भीतर ही दुनियाभर के समाज आश्चर्यजनक रूप से उन सामाजिक व भावनात्मक मुद्दों पर बात करने में सहजता महसूस करने लगे हैं, जिन्हें वे पहले कालीन के नीचे धकेल दिया करते थे। भारत में एक मंत्री को त्याग-पत्र देना पड़ा, कई नौकरियां गईं और कई प्रभावशाली लोगों को प्रतिष्ठा गंवानी पड़ी। महिलाएं खुद के बारे में जिस तरह देखने लगी हैं वह स्पष्ट बदलाव है। सवाल यह है कि हम इस क्रांति को किस तरह कायम रखें?

भारतीय महिलाओं को डोनाल्ड ट्रम्प को धन्यवाद देना चाहिए, जिनके पुरुषी अहंकार ने अमेरिका में महिलाओं का #Me Too आंदोलन शुरू कर दिया। अब यह हमारे यहां पहुंच गया है, जिसने उन दर्जनों महिलाओं को आवाज दी है, जिन्हें नियमित रूप से यौन दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा है। इसने पुरुषत्व की पितृसत्तात्मक धारणा के प्रति तिरस्कार की लहर पैदा की है। कुछ कंपनियों ने खुद पहल कर महिला कर्मचारियों से कहा है कि वे आगे आकर आवाज उठाएं। लेकिन, जब तक हमारा समाज लड़कों की परवरिश अलग ढंग से करना नहीं सीखता, ऐसे आंदोलन बेनतीजा रहेंगे। भारत का 'मी टू' आंदोलन पुरुषों को बदनाम करने के लिए या व्यक्तिगत रंजिश निकालने का आंदोलन नहीं है। इसका संबंध पुरुषों व महिलाओं के बीच सत्ता संबंधी रिश्तों को अधिक समानता की दिशा देने से है। इसके लिए पालकों को लड़कों व लड़कियों की अधिक समानता के साथ परवरिश करनी होगी और कम उम्र से ही लड़कों-लड़कियों का सम्मान करना सिखाना होगा।

बहुत समय नहीं हुआ, जब उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने दुष्कर्म पर अपनी इस सनकभरी प्रतिक्रिया से देश में रोष पैदा कर दिया था कि 'लड़के तो लड़के ही रहेंगे!' उनके विचार से योद्धा, व्यापारी, मठाधीश आदि बनकर और संपत्ति व सत्ता के लिए संघर्ष करके लड़के अपना पुरुषत्व हासिल करते हैं। महत्व सिर्फ कठोर व सफल होने का है। उनके दिमाग में यह बात नहीं आई कि इन पुरुषोचित महत्वाकांक्षाओं की जड़ें महिला के साथ सुरक्षित भावनात्मक जीवन में हैं। चूंकि बेटों से 'बाहर जाकर दुनिया जीतने' की अपेक्षा होती है, वे अपनी भावनाओं और गहरी व प्रेमपूर्ण मित्रता की क्षमता का दमन करना सीख जाते हैं। वे अड़ियल, भावनाहीन और सख्त होना सीखते हैं। लड़कियों की भावनाओं का दमन करके परवरिश की जाती है। पितृ सत्तात्मक समाज और असमानता को मिटाना आसान नहीं है, जिसे

महिलाओं के प्रति गहरे नकारात्मक दृष्टिकोण वाली मनुस्मृति से पोषण मिला है। स्त्री भावना यानी महिला का 'जैविक स्वभाव' जिसे 'परिवार व समाज के प्रति उनके कर्तव्यों' के स्त्री धर्म से नियंत्रित किया जाता है। मनु का मानना था कि महिला चंचल होती है और एंद्रिक सुख-भोग के प्रति उसमें जन्मजात लिप्सा होता है। इसलिए उसका जल्दी विवाह करके उसकी रक्षा करनी चाहिए। चूंकि कोई आदमी महिला की सारे समय रक्षा नहीं कर सकता, इसलिए उसे अपने विचार, भावनाएं और गतिविधियों को नियंत्रित करके खुद की रक्षा करना सीखना चाहिए। इसलिए सीता और सावित्री की प्रेरक कहानियां उसे स्त्री धर्म की शिक्षा देकर समाज में दोयम दर्जा स्वीकार करने के लिए मानसिक रूप से तैयार करती हैं। राज्य मंत्री पोन राधाकृष्णन ने तिरस्कारपूर्वक 'मी टू' आंदोलन को विकृत मन का नतीजा बताते हुए पूछा, 'हमने पांचवीं कक्षा में जो किया, उसे लेकर हमें क्यों चिंता करनी चाहिए।' जवाब यह है कि समय कोई अपरिवर्तनीय क्षणों का पैमाना नहीं है।

फ्रांसीसी लेखक मार्सेल प्राउस्ट बताते हैं कि किसी घटना की स्मृति मूल, भ्रमपूर्ण घटना से कहीं अधिक शक्तिशाली हो सकती है। याददाश्त हमें पुरानी स्मृतियों के मूल स्रोत पर ले जाती है, जो मौजूदा वक्त की किसी चीज से जागृत हो जाती है। इसलिए हमें 'मी टू' आंदोलन में महिलाओं की कहानियों को सिर्फ इसलिए कम करके नहीं आंकना चाहिए, कि वे बरसों पहले हुई थीं। यही वजह है कि कार्यस्थल पर व्यवहार संबंधी ऐतिहासिक फैसले लिखने वाले जजों में से एक जस्टिस मनोहर ने कहा है कि विशाखा गाइडलाइन में भूतकाल की घटनाएं भी शामिल की जानी चाहिए।

पिछले अमेरिकी चुनाव ने दिखाया कि सारी महिलाएं एक जैसा नहीं सोचतीं। आधी श्वेत महिलाओं ने डोनाल्ड ट्रम्प को वोट दिया तो 90 फीसदी से ज्यादा अश्वेत, दो-तिहाई हिस्पेनिक और ज्यादातर एशियाई मूल की अमेरिकी महिलाओं ने हिलेरी क्लिंटन को वोट दिया। इसमें भारतीय युवा महिलाओं को संदेश है कि उन्हें राजनीति में शामिल होना चाहिए। प्यू रिपोर्ट ने बताया कि 2016 के चुनाव के बाद से तिहाई महिलाएं किसी राजनीतिक आयोजन या प्रदर्शन में शामिल हुई हैं। 476 की रिकॉर्ड संख्या में महिलाएं वहां प्रतिनिधि सभा के चुनाव में खड़ी हुईं। भारत में महिला रोल मॉडल जितनी अधिक राजनीतिक भूमिका निभाएंगी, उतनी किशोर उम्र लड़कियों में नैतिकता बोध की स्पष्टता दिखाई देगी।

पिछले माह हमने नवरात्रि उत्सव मनाया, जिसमें दुर्गा देवी अज्ञान की शक्ति के प्रतीक महिषासुर का वध करती हैं। 'मी टू' भी उस विजय का प्रतीक है। महिलाओं के लिए न्याय की लड़ाई अभी शुरू हुई है। नरेन्द्र मोदी को श्रेय है कि उन्होंने समझा कि मूल कारण लड़कों के पालन-पोषण के हमारे तरीके में है। अपने स्वतंत्रता दिवस के एक भाषण में उन्होंने पालकों से पूछा था कि घर पर लड़कियों के देर से आने पर ही हम चिंतित क्यों होते है, लड़कों के देर से आने पर क्यों नहीं? लड़कों को बहुत जल्दी कुछ बातें सिखा देनी चाहिए, जिसमें महिला के व्यक्तिगत दायरे की सीमा रेखा शामिल है, जिसका उसकी अनुमति के बिना उल्लंघन नहीं होना चाहिए। इससे महिलाओं के लिए बेहतर, सुरक्षित व कामकाजी माहौल बनाने में मदद मिलेगी। इस बीच आइए दोनों महिलाओं का साहसपूर्वक आगे आने और सुप्रीम कोर्ट को निजता, तीन तलाक, समलैंगिकता को अपराध के दायरे से मुक्त करने और स्त्री-पुरुष संबंधों पर ऐतिहासिक फैसले देने के लिए बधाई दें। यह सब मिलकर भारत के जागरण के युग को आकार देते हैं।

---

नईदुनिया

**Date: 16-11-18**

# समावेशी विकास की चुनौती

**संपादकीय**

सिंगापुर में पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने व्यापक आर्थिक भागीदारी को लेकर जिस भारतीय दृष्टिकोण को व्यक्त किया वह नया नहीं है। भारतीय प्रधानमंत्री को इस दृष्टिकोण को फिर से व्यक्त करने की जरूरत शायद इसलिए पड़ी, क्योंकि चीन हिंद-प्रशांत क्षेत्र में वैसे ही अपना आधिपत्य कायम करना चाह रहा है जैसे वह दक्षिण चीन सागर क्षेत्र कर रहा है। वह एक ओर तो खुले वैश्विक व्यापार की वकालत कर रहा है और दूसरी ओर अपनी विस्तारवादी नीतियों से तमाम पड़ोसी देशों को चिंतित भी कर रहा है। ऐसा रवैया केवल क्षेत्रीय और वैश्विक शांति को ही चोट नहीं पहुंचाता, बल्कि हथियारों की होड़ को भी बढ़ावा देता है।

भले ही प्रत्येक अंतरराष्ट्रीय मंचों पर खुले व्यापार, आर्थिक सहयोग के साथ समावेशी विकास और निर्धनता निवारण के लिए काम करने की जरूरत जताई जाती हो. लेकिन तथ्य यह है कि ऐसी बातों के साथ विभिन्न देशों की ओर से ऐसे कदम भी उठाए जाते हैं जिनसे हथियारों की होड़ बढ़ती है। इसके चलते प्रतिस्पर्धा अविश्वास में तब्दील होती है। जब ऐसा होता है तो समावेशी विकास और निर्धनता निवारण के लक्ष्य पीछे छूटते हैं। बेहतर हो कि भारत अंतरराष्ट्रीय मंचों पर इस बात को और जोरदारी से रेखांकित करे कि हथियारों की होड़ पर विराम लगाए बगैर निर्धनता में जकड़ी दुनिया की विशाल आबादी का उत्थान संभव नहीं है।

नि:संदेह किसी भी क्षेत्र में कोई एक अकेला देश हथियारों की होड़ नहीं रोक सकता। यह तो तभी संभव है जब दुनिया के बड़े देश इस दिशा में ठोस पहल करें। यह चिंताजनक है कि वर्तमान में ऐसा होता नहीं दिख रहा है। इससे भी खराब बात यह है कि कुछ बड़े देश विश्व शांति और सद्भाव के लिए खतरा बने आतंकवाद को पोषित करने वाले देशों को जवाबदेह बनाने से कतराते हैं। ऐसे में भारत और अन्य विकासशील देशों की समस्याएं कहीं अधिक बढ़ जाती है, क्योंकि उनके सामने यह एक कठिन चुनौती पहले से ही है कि वे अपनी आबादी के एक बड़े हिस्से को गरीबी रेखा से ऊपर कैसे लाएं? यह सही है कि पिछले एक दशक में भारत समेत अन्य देशों में अच्छी-खासी आबादी को गरीबी रेखा से ऊपर लाने में सफलता मिली है, लेकिन तथ्य यह भी है कि इस मोर्चे पर अभी बहुत कुछ करना है।

यह बहुत कुछ तभी संभव हो पाएगा जब दुनिया के बड़े देश आर्थिक सहयोग और शांति का माहौल बनाएं। अच्छा होगा कि वे सहयोग के उस भारतीय दृष्टिकोण को समझें जो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने सिंगापुर में दोहराया और इस क्रम में यह भी बताया कि तकनीक का बेहतर इस्तेमाल किस तरह करोड़ों लोगों के जीवन में बदलाव ला रहा है। बदलाव के इस सिलसिले को तभी गति दी जा सकती है जब क्षेत्रीय और वैश्विक शांति को बल मिले। वित्त मंत्री अरुण जेटली ने यह सही कहा कि देश में गरीबी को कम करने और विकास के लाभ निर्धन तबके तक पहुंचाने के लिए उच्च आर्थिक विकास दर जरूरी है। यह विकास दर और कैसे बढ़े, इस पर यदि कोई राष्ट्रीय सहमति बन सके तो वह दुनिया के लिए उदाहरण बन सकती है।

जनसत्ता

Date: 15-11-18

# सहयोग का सिलसिला

**संपादकीय**

सिंगापुर में आयोजित आसियान देशों का इस बार का शिखर सम्मेलन भारत के लिए कई तरह से उत्साहजनक है। प्रधानमंत्री ने फिनटेक फेस्टिवल में बैंकिंग प्रौद्योगिकी प्लेटफार्म एपिक्स का उद्घाटन किया। एपिक्स यानी अप्लिकेशन प्रोग्रामिंग इंटरफेस एक्सचेंज एक ऐसा सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है, जिसके जरिए हमारे देश की कंपनियां दुनिया भर के वित्तीय संस्थानों से जुड़ सकेंगी। जाहिर है, इससे अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलेगी। पिछले कुछ सालों में जिस तरह इंटरनेट का विस्तार हुआ है और कारोबार के क्षेत्र में इससे काफी मदद मिलने लगी है, एपेक्स उसे और गति देगा। पिछले एक साल में आसियान देशों के साथ भारत के कारोबार में दस फीसद से अधिक बढ़ोतरी हुई है। भारत के कुल निर्यात का ग्यारह फीसद से अधिक हिस्सा सिर्फ आसियान देशों के साथ हुआ। इस तरह सम्मेलन से कारोबार के क्षेत्र में और बढ़ोतरी की उम्मीद बनी है। आसियान सम्मेलन का सबसे बड़ा मकसद आपस में कारोबार और सुरक्षा संबंधी मसलों पर एकजुट होकर काम करना है। आसियान देशों में भारत एक मजबूत अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है, इसलिए भी इसे खास तवज्जो दी जाती है। इस साल फिनटेक फेस्टिवल में भारत के प्रधानमंत्री को संबोधित करने का मौका देकर एक तरह से भारत की आर्थिक ताकत को रेखांकित किया गया।

इस सम्मेलन की दूसरी बड़ी उपलब्धि प्रधानमंत्री की अमेरिकी उपराष्ट्रपति माइक पेंस से मुलाकात और हिंद-प्रशांत क्षेत्र को खुला रखने तथा सुरक्षा संबंधी मसलों पर बातचीत रही। जून में प्रधानमंत्री और अमेरिकी रक्षामंत्री सिंगापुर में ही मिले थे और उन्होंने बंद कमरे में क्षेत्र में प्रतिरक्षा संबंधी मसलों पर बातचीत की थी। उसी बातचीत का सिलसिला आगे बढ़ाते हुए अमरिकी उपराष्ट्रपति ने प्रधानमंत्री से बातचीत की। दरअसल, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन अपना दबदबा बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। इसके लिए वह अपने पड़ोसियों पर दबाव भी बना रहा है। इसलिए भारत और अमेरिका की चिंता स्वाभाविक है। वे दोनों इस पक्ष में हैं कि हिंद-प्रशांत क्षेत्र को खुला और समृद्ध बनाया जाना चाहिए। पिछले दिनों जब प्रधानमंत्री जापान की यात्रा पर गए थे, तब भी दोनों देशों के बीच इसी क्षेत्र को सुरक्षित और समृद्ध बनाने की जरूरत पर बल दिया गया। जापान इस मामले में पूरी तरह सहयोग को तैयार है। अगर अमेरिका भी इसमें हाथ मिला लेता है, तो चीन की मुश्किलें निस्संदेह बढ़ेंगी। इस लिहाज से अमेरिकी उपराष्ट्रपति से प्रधानमंत्री की बातचीत हिंद-प्रशांत क्षेत्र को खुला और समृद्ध बनाने की दिशा में नई उम्मीद जगाती है।

आसियान देशों का आर्थिक रूप से मजबूत होना चीन के लिए बड़ी चुनौती है। अभी तक विश्व बाजार के बड़े हिस्से पर चीन का कब्जा है। आसियान देशों का परस्पर कारोबारी संबंध प्रगाढ़ होने और तकनीक के जरिए एक-दूसरे देश की कंपनियों और वित्तीय संस्थाओं के जुड़ने से बहुत सारे मामलों में चीन पर से निर्भरता खत्म होगी। फिर हिंद-प्रशांत क्षेत्र को मुक्त रखने से चीन का सैन्य दबदबा समाप्त होगा। वह पाकिस्तान को इसीलिए शह देता रहता है, आतंकवाद जैसे मसलों पर पाकिस्तान पर कस रहे शिकंजे के खिलाफ खड़ा होता रहता है कि उसके जरिए वह हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपना प्रभाव जमा सकेगा। पर अगर अमेरिका, जापान आदि देश हिंद-प्रशांत क्षेत्र को मुक्त रखने के पक्ष में खड़े होते हैं, तो चीन के लिए पाकिस्तान को लंबे समय तक शह देते रहना संभव नहीं होगा। इस लिहाज से सिंगापुर आसियान शिखर

सम्मेलन व्यापार और प्रतिरक्षा मामलों में भारत के लिए उल्लेखनीय तो रहा ही, इसके जरिए विश्व बिरादरी में नए समीकरण भी बने।

---

राष्ट्रीय सहारा

*Date: 15-11-18*

# बढ़नी चाहिए संख्या

**डॉ. ललित कुमार**

अधिकांश निजी विद्यालय वाले केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की दशा सुधार कर इसे नई दिशा देने की सरकारी कोशिश प्रशंसनीय है, किन्तु विद्यालयीन शिक्षा में अपेक्षित विकास का हर प्रयास अधूरा साबित होगा यदि सरकारी विद्यालयों की संख्या और गुणवत्ता के लिए केंद्र तथा राज्यों की सरकारें दृढ़ता से जरूरी कदम नहीं उठाती हैं। एक खबर के अनुसार सत्रह जुलाई, 2018 को केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से संबंधित कुल विद्यालयों की संख्या देश में 20299 और 25 अन्य देशों में 220 बताई गई, जिसमें निजी संस्थाओं की संख्या 15837 थी। वर्तमान में अनुमानतः देश के कुल 20783 विद्यालयों में केंद्रीय विद्यालय-1195, सहायताप्राप्त सरकारी विद्यालय-2953, नवोदय विद्यालय-598 तथा केंद्रीय तिब्बत शिक्षा संगठन के विद्यालय-14 हैं। बाकी निजी संगठनों द्वारा संचालिक स्वतंत्र विद्यालय हैं।

यदि हम आकलन करें तो पाते हैं कि केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालयों में निजी विद्यालयों की भागीदारी 77 फीसदी से अधिक है। केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालयों की संख्या 1962 में केवल 309 थी, और अब 20750 से अधिक। इनमें सरकार जल्द 8000 विद्यालय और शामिल करने की तैयारी कर चुकी है। मानव संसाधन विकास मंत्री संबद्धता नियमों में बदलाव कर नये विद्यालयों का मार्ग प्रशस्त करने को तत्पर हैं। इसके लिए तीन दशक पुराने मानकों में बदलाव और संबद्धता नियमों की जटिलता दूर करना लाजिमी है। सरकार की सक्रियता का प्रमाण है कि इसने संबद्धता की प्रक्रिया को आसान बनाते हुए पूर्व में आवश्यक 12-14 दस्तावेज को सिर्फ दो दस्तावेज तक सीमित किया है। पहला-जिला शिक्षा प्रशासन से भूमि स्वामित्व, भवन सुरक्षा एवं स्वच्छता संबंधी प्रमाणपत्र; तथा दूसरा- शुल्क मानक, आधारभूत संरचना मानक आदि से संबंधित शपथ पत्र। संबद्धता संबंधी प्रक्रिया को पारदर्शी और आसान बनाने के लिए इसे ऑनलाइन किया गया है।

विद्यालय निरीक्षण का कार्य आवेदन प्राप्ति के साथ ही शुरू होगा और इसकी प्रकृति भी अकादमिक होगी। संतोषजनक निरीक्षण रिपोर्ट के बाद बोर्ड विद्यालयों को संबद्धता संबंधी पत्र भेजेगा और कार्यवाही को आगे बढ़ाने में शिक्षकों के प्रशिक्षण, केवल निर्धारित शुल्क लिए जाने तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए सतत प्रयास के क्रम में सौर ऊर्जा, वर्षा जल संरक्षण एवं हरित परिसर के लिए किए जाने वाले प्रयास को आधार बनाएगा। प्राचार्य एवं उपप्राचार्य को भी प्रति वर्ष दो-दिवसीय अनिवार्य प्रशिक्षण प्राप्त करना होगा। यद्यपि निजी संस्थानों को नियंत्रित रखने का संकल्प मानव संसाधन विकास मंत्रालय की योजना में मुखर है, फिर भी भारत जैसे युवा जनसंख्या वाले विशाल देश की समावेशी प्रकृति की

शिक्षा के लिए यह नाकाफी है। प्रश्न है कि केंद्रीय विद्यालयों और नई शिक्षा नीति, 1986 की उपज नवोदय विद्यालयों की संख्या इतनी कम उस देश में क्यों है, जिसका संकल्प लोक-कल्याणकारी समावेशी शिक्षा प्रदान करना है।

हमें इलाहाबाद उच्च न्यायालय के उस निर्णय को भी अपनाना होगा जिसमें आदेश दिया गया है कि सरकारी संस्थाओं से वेतन पाने वाले सभी पदाधिकारी-कर्मचारियों के बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा सरकारी विद्यालय में अनिवार्यत: सुनिश्चित की जाए। भारत के भीतर कई और भारत बनाने वाले महंगे संस्थान समावेशी शिक्षा प्रदान नहीं कर सकते, फिर राज्य एवं केंद्र सरकारें सरकारी विद्यालयों की संख्या एवं गुणवत्ता बढ़ाने के प्रति इतनी तटस्थ क्यों हैं? मॉडल स्कूल खोलने की योजना शिथिल है, बजट में घोषित जनजातीय विद्यार्थियों के लिए हर जनजातीय ब्लॉक में एकलव्य आवासीय विद्यालय खोलने की प्रतिबद्धता की परीक्षा शेष है। कस्तूरबा बालिका विद्यालयों को और समर्थ बनाने की जरूरत है, तो अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लिए अभी और तैयारी करने की आवश्यकता।

विद्यालयीन शिक्षा पर खर्च बढ़ाना ही होगा। यदि हमें आगे जाना है, और उच्च शिक्षा को मजबूत आधार प्रदान करना है तो यह जरूरी है। यह तो एक मजदूर भी जानता है कि केंद्रीय माध्यमिक बोर्ड से संबद्धता प्राप्त विद्यालय के तथाकथित मालिक कितने अमीर होते हैं, उनके शिक्षक कितनी राशि में कार्य करते हैं, पढ़ने वाले बच्चों की जेब की हैसियत कितनी होती है, और फिर यह कि इसकी प्रकृति समावेशी नहीं होती। मात्र दस रुपये में परीक्षा में लिखी गई कॉपियां सूचना के अधिकार के तहत केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा मुहैया कराई जाएगी-यह भी सुखद समाचार है। संभव है कि इससे बोर्ड द्वारा मूल्यांकन में हुई हालिया गड़बड़ियों की संख्या घटे। विद्यार्थी सदमे एवं परेशानी के शिकार होने से बच सकें। नये फार्मेट के आधार पर सूचना मांगने के लिए विद्यार्थियों को कुछ विशेष जानकारी देनी होगी। यह भी बोर्ड का बड़ा फैसला है कि मूल्यांकन के बाद अंकों की गणना में होने वाली किसी गलती से बचने के लिए मूल्यांकन केंद्रों पर गणित और कंप्यूटर शिक्षक तैनात किए जाएं परंतु विद्यालयीन शिक्षा में कई सुधार व बदलाव इससे भी अधिक जरूरी हैं क्योंकि शिक्षा अंक या फिर अकादमिक उपलब्धि तक सीमित नहीं होती। बुनियादी तालीम एवं गुरुकुल पणाली के मूल तत्व अपनाने की जरूरत है। शारीरिक श्रम शिक्षा का अभिन्न अंग होना चाहिए। गांधी के एजुकेशन फॉर री एच-हेड, हार्ट एवं हैंड के सिद्धांत को अपनाना होगा। विद्यालयीन शिक्षा सिर्फ अकादमिक ज्ञान देने तक सीमित नहीं हो, मूल्य एवं नैतिक शिक्षा, जेंडर एजुकेशन, जनसंख्या शिक्षा, भाषा ज्ञान, आपदा प्रबंधन जैसे सम्प्रत्यय भी शिक्षा का अभिन्न अंग हों।

नेतरहाट विद्यालय की तर्ज पर भी विद्यालय खोलने की आवश्यकता है। चीन की उच्च शिक्षा के विकास और उसकी चौतरफा प्रगति में विद्यालयीन शिक्षा की मजबूती का बड़ा योगदान है। भारत में सरकार को प्रबलता से सरकारी विद्यालयों की संख्या और उनकी गुणवत्ता बढ़ाने के लिए तत्पर होने की जरूरत है। विद्यालयीन शिक्षा के विकास के लिए समान विद्यालयीन पणाली को लागू करना निजी संस्थानों को मजबूती प्रदान करने से अधिक लाभकारी है। आखिर, कोठारी आयोग, मुदलियार आयोग तथा नई शिक्षा नीति, 1986 की संस्तुतियों की अनदेखी उस देश में क्यों है, जिसकी करीब-करीब सभी राजनीतिक पार्टियां कमजोर तबकों और अरसे से उपेक्षित लोगों के कल्याण का नाम लेकर राजनीति करती हैं।

Live हिन्दुस्तान.com

*Date: 15-11-18*

# सैनिक जिनके हिस्से बदनामी आई

**शशि थरूर, कांग्रेस सांसद**

प्रथम विश्व युद्ध को समाप्त हुए 100 वर्ष हो गए। साल 1918 में 11 नवंबर की सुबह 11 बजकर 11 मिनट पर इस जंग का परदा गिरा था। उस ऐतिहासिक घटना को दुनिया भर में याद किया गया, मगर अपने देश में शायद ही कोई हलचल हुई। हालांकि यह कोई नई या आश्चर्य की बात नहीं है। 1964 में जब दुनिया प्रथम विश्व युद्ध की 50वीं वर्षगांठ मना रही थी, तब भी जंग में शामिल भारतीय सैनिकों को शायद ही कहीं याद किया गया था; भारत में भी नहीं। तब अपना सब कुछ बलिदान करने वाले इन सैनिकों को याद न करना कोई आश्चर्य नहीं माना गया था। ऐसा भी नहीं था कि देश में प्रथम विश्व युद्ध के स्मारकों की कोई कमी थी। मगर तब आम भावना यही थी कि औपनिवेशिक शासन से हाल-फिलहाल आजाद हुआ भारत औपनिवेशिक युद्ध में अपने सैनिकों की भागीदारी से शर्मिंदा था और इसमें याद करने जैसी कोई बात नहीं दिख रही थी।

बेशक इस युद्ध ने यूरोप के तमाम नौजवानों को अकाल मौत दी, मगर इस जंग में दूर देशों के वे सैनिक भी शामिल हुए, जिनका यूरोप की कड़वी पारंपरिक नफरत से कोई लेना-देना नहीं था। वे अपने देश के लिए नहीं लड़ रहे थे। लड़ना उनका पेशा था। वे उसी ब्रिटिश साम्राज्य की सेवा कर रहे थे, जो उनके मूल वतन में उनके ही लोगों का दमन कर रहा था। जनवरी 1915 में दक्षिण अफ्रीका से लौटे महात्मा गांधी ने भी उसी तरह इस युद्ध का समर्थन किया, जिस तरह उन्होंने बोअर युद्ध में अंग्रेजों का समर्थन किया था। हालांकि प्रथम विश्व युद्ध में साथ देने के एवज में अंग्रेजों ने भारतीयों से ऊंची लगान ही वसूली, जबकि इसके कारण कारोबार में आई रुकावट से देश व्यापक रूप से आर्थिक चोट खा चुका था। यह सब तब हुआ, जब देश इंफ्लूएन्जा की महामारी और गरीबी से जूझ रहा था।

इस सबके बावजूद भारतीय राष्ट्रवादियों ने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ विद्रोह या बगावत को बढ़ावा देकर ब्रिटेन की लाचारी का फायदा नहीं उठाया। वे अंग्रेजों के साथ खड़े रहे। उस दौरान अंग्रेजों के खिलाफ कोई विद्रोह नहीं हुआ, हालांकि पंजाब और बंगाल में सियासी अस्थिरता बनी रही। महात्मा गांधी ने बेशक 1917 में निलहों के पक्ष में चंपारण सत्याग्रह और गुजरात में अन्यायपूर्ण करों के खिलाफ खेड़ा सत्याग्रह की शुरुआत की, लेकिन ये सभी किसी अन्याय विशेष के खिलाफ शुरू किए गए थे, यह ब्रितानिया हुकूमत के खिलाफ कोई जन-विद्रोह नहीं था।

1917 तक युद्ध में मित्र देशों की सेनाएं हावी होती दिखने लगीं, तो भारतीय राष्ट्रवादी हमवतन सैनिकों के सर्वोच्च बलिदान को मान्यता देने की मांग करने लगे। इसके बाद ब्रिटेन के भारत संबंधी मामलों के सचिव सर एडविन मोंटग्यू ने संसद में ऐतिहासिक 'अगस्त घोषणा' करते हुए कहा कि भारत के लिए ब्रिटेन की नीति 'प्रशासन के हर अंग में भारतीयों का प्रतिनिधित्व बढ़ाने की है और चूंकि भारत ब्रिटिश साम्राज्य का अभिन्न अंग है, इसीलिए वहां जिम्मेदार सरकार के जीवंत एहसास के साथ-साथ भारतीयों के स्वायत्त शासकीय निकायों का क्रमिक विकास किया जाएगा'। इससे

उस वक्त यही समझ बनी कि युद्ध की समाप्ति के बाद भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य (डोमिनियन स्टेटस) का दर्जा मिल जाएगा।

लेकिन ऐसा होना नहीं था। युद्ध खत्म होने के बाद ब्रिटेन वादे से मुकर गया। स्थानीय शासन की बजाय ब्रिटिश हुकूमत ने दमनकारी रॉलेट ऐक्ट लागू किया, जिसमें वायसराय को 'राष्ट्रद्रोह' कुचलने के लिए असीमित अधिकार दे दिए गए। प्रेस को दबाने व खबरें सेंसर करने, मुकदमा चलाए बिना राजनीतिक आंदोलनकारियों की हिरासत और ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ किसी भी तरह के आचरण के संदेह मात्र से बिना वारंट किसी को भी गिरफ्तार कर लेने जैसी ताकत सरकार को दे दी गई। इन काले कानूनों के खिलाफ विद्रोह हुआ, तो उसे भी बर्बर तरीके से कुचला गया। अप्रैल, 1919 में हुआ जलियांवाला बाग नरसंहार इसी की चरम परिणति था। इससे 'डोमिनियन स्टेटस' मिलने और 'प्रगतिशील स्वायत्त शासन' की उम्मीदें जमींदोज हो गईं। तब गांधी और अन्य राष्ट्रवादियों ने यही नतीजा निकाला कि आजादी से कुछ भी कम भारत में ब्रिटिश शासन के अन्याय का अंत नहीं कर सकेगा।

विश्वासघाती अंग्रेजों ने युद्ध का जैसा कड़वा अनुभव दिया था, उसके बाद राष्ट्रवादियों की यही सोच बननी थी कि देश को ऐसा कुछ नहीं मिला है कि इन सैनिकों का आभार जताया जाए। सांसद के रूप में, मैंने दो बार राष्ट्रीय युद्ध स्मारक की मांग उठाई और दोनों बार मुझे यही बताया गया कि भारत में इसे बनाने की कोई योजना नहीं है। मेरे लिए यह संतोष की बात थी, जब भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय युद्ध स्मारक और संग्रहालय बनाने की अपनी मंशा जाहिर की और जिसे एक महीने में पूरा कर भी लिया जाएगा। निश्चय ही हम कोई सैन्य समाज नहीं हैं, मगर एक ऐसे देश के लिए, जो कई लड़ाइयों में शामिल रहा हो और जिसने अपने कई नायक गंवाए हों, वहां सैनिकों की याद या उनके सम्मान में किसी स्मारक का न होना अजीब लगता है।

मगर अब यह शताब्दी-वर्ष फिर से सोचने को मजबूर कर रहा है। कई भारतीयों के लिए, जिज्ञासा ने औपनिवेशिक युग की नाराजगी को कम किया है। अब हम प्रथम विश्व युद्ध के भारतीय सैनिकों को ऐसे इंसान के रूप में देखने लगे हैं, जिन्होंने विदेशी जमीन पर भी अपने देश के जज्बे को जिंदा रखा। दिल्ली की सेंटर फॉर आम्र्ड फोर्सेस हिस्टोरिकल रिसर्च दिन-रात उसी युग को यादगार बनाने की दिशा में काम कर रही है और पहले विश्व युद्ध में भाग लेने वाले 13 लाख भारतीय सैनिकों की बिसरी कहानी को फिर से जिंदा कर रही है। जिस तरह साम्राज्यवाद का अंत हुआ है, उसके दमन और नस्लवाद का एहसास उसी तेजी से बढ़ा है। बड़े पैमाने पर यही सोच है कि इसके सैनिकों ने एक गलत मकसद के लिए अपनी सेवाएं दीं। मगर सच यही है कि वे ऐसे लोग थे, जिन्होंने अपने कर्तव्य को भले ही जैसे भी देखा-समझा, पर उसे पूरी शिद्दत से निभाया। और वे सभी भारतीय थे। यह खुशी की बात है कि अब उनके अपने देश में उन्हें वह सम्मान मिलने लगा है, जिससे वे अब तक वंचित थे।